THE ECONOMIC TIMES

Date:21-03-22

Putting more Indo into the Indo-Pacific

ET Editorials

India continues its balancing act on the Russian invasion of Ukraine. Discussions between visiting Japanese Prime Minister Fumio Kishida and Narendra Modi addressed the situation in Ukraine. The joint statement does not call out Russia for violating the sovereignty of Ukraine or the unfolding humanitarian crisis. The agreements between India and Japan, including investments worth $42 billion over five years, and the geopolitics of the Indo-Pacific are factors New Delhi must consider as it fashions its global engagement.

India-Japan ties are historical, going beyond economy to include intangible bonds. Yet, the high gear partnership is relatively new. Kishida's India visit, his first foreign visit as prime minister, has deepened these ties with clean energy partnerships and investments, agreements ranging across sectors - wastewater management, electric vehicle development, horticulture, etc. These partnerships are critical to India's ambitions of growing its economy and creating jobs. As is India's critical role in ensuring a free and open Indo-Pacific. As a major developing country economy, India must recognise that it cannot do it alone. It will require engaging with the world - which means taking positions and considering trade-offs.

Kishida is spot on - Russia's invasion of Ukraine has changed international relations. Historically, India's approach has been part reactive and part avoidance. It worked for a long time, even after the Cold War. The war in Ukraine has changed that. India's engagement with the world must be more strategic, recognising trade-offs, and long-term interests. As a developing country with a global presence, India must become the voice of those who are not at the table, including the left behind.

दैनिक जागरण

Date:21-03-22

अमरबेल सरीखी वंशवादी राजनीति

उमेश चतुर्वेदी, (लेखक राजनीतिक विश्लेषक हैं)

वर्ष 1994 में आई फिल्म 'सरदार' का एक दृश्य है। उसमें दिखाया है कि सरदार पटेल शाम को थके-हारे घर लौटे हैं। बिस्तर पर लेट ही रहे हैं कि अपनी बेटी मणिबेन से घर आई डाक के बारे में पूछते हैं। मणिबेन बताती हैं कि भाई दिल्ली आना चाहता है। पटेल मणिबेन को सुझाव देते हैं कि वह लौटती डाक से चिट्ठी भेज दे कि जब तक वह मंत्री हैं, तब तक वह दिल्ली आने की न सोचे। इसका अंतर्निहित संदेश यही है कि पटेल जब तक जीवित रहे, उन्होंने अपने परिवार के किसी व्यक्ति को राजनीति में उन्होंने आगे नहीं बढ़ाया। असल में यह विवरण विगत 15 मार्च को हुई भाजपा

संसदीय दल की बैठक में परिवारवाद की राजनीति पर प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के प्रहार से प्रासंगिक प्रतीत होता है। उसमें प्रधानमंत्री ने दो-टूक कहा था कि हालिया विधानसभा चुनावों में पार्टी नेताओं के बेटे-बेटियों के टिकट उनके कहने पर काटे गए। उन्होंने कहा कि भारतीय राजनीति को परिवारवाद खोखला कर रहा है और हमें इससे निपटना होगा।

वैसे तो लोकतंत्र में परिवारवाद का कोई आधार नहीं होना चाहिए, लेकिन आज शायद ही कोई पार्टी हो, जहां परिवारवाद नहीं है। कुछ छोटी पार्टियां तो प्राइवेट लिमिटेड कंपनियों की तरह काम कर रही हैं। कह सकते हैं कि लोकतंत्र के खांचे में परिवार केंद्रित यह नए तरह का राजतंत्र है। यह विडंबना ही है कि जिस कांग्रेस में पटेल जैसे नेताओं का वंशवाद के खिलाफ सख्त रुख रहा, उसी के शीर्ष नेतृत्व पर परिवारवाद पूरी तरह हावी रहा। हालांकि अब इस पर सवाल उठ रहे हैं, लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि इसकी कुछ ठोस परिणति भी निकलेगी। कांग्रेस में वंशवादी जड़ें बहुत गहरी हैं। वर्ष 1928 में मोतीलाल नेहरू दूसरी बार कांग्रेस अध्यक्ष बने। इसके अगले साल यानी 1929 में उन्होंने अपने पुत्र जवाहरलाल नेहरू को अध्यक्ष बनाने के लिए अभियान चलाया और 40 वर्षीय जवाहर को अध्यक्ष बनवाने में सफल रहे। तब जवाहर से 14 साल बड़े पटेल का अध्यक्ष बनना तय था। पटेल 1930 में अध्यक्ष बन सके।

वैसे कुछ कांग्रेस नेता समय-समय पर परिवारवाद के विरुद्ध आवाज भी उठाते रहे। उनमें श्री बाबू के नाम से विख्यात बिहार के पूर्व मुख्यमंत्री श्रीकृष्ण सिंह का नाम प्रमुख है। 1957 के चुनाव में उनकी परिक्रमा करने वालों ने उनके बेटे शिवशंकर को टिकट देने की मांग रखी। तब श्री बाबू ने इसे सिद्धांतहीन बताते हुए कहा था कि परिवार में एक ही व्यक्ति को टिकट मिलना चाहिए।

कांग्रेस में वंशवाद का दूसरा उदाहरण भी गांधी-नेहरू परिवार से ही है। 1958 में पं. नेहरू ने कांग्रेस कार्यसमिति के 24 सदस्यों में 41 वर्षीय इंदिरा गांधी को शामिल कराया और इसके अगले ही साल इंदिरा पार्टी की अध्यक्ष बना दी गईं। नेहरू के इस कदम का देहरादून से संसद सदस्य और उनके नजदीकी महावीर त्यागी ने तीखा विरोध किया था। नेहरू को लिखे पत्र में त्यागी ने कहा था, 'इस ख्याल में मत रहना कि इंदु के प्रस्तावकों और समर्थकों में जो होड़ हो रही है, यह इंदु के व्यक्तित्व के असर से है। सौ फीसद यह आपको खुश करने के लिए किया जा रहा है। यह समझ लो कि अब कांग्रेस में पदलोलुपता और व्यक्तिवाद का वातावरण छा गया है।' परिवारवाद को लेकर लोकसभा में डा. लोहिया की भी नेहरू से तीखी झड़प हुई थी।

आज कानून के मुताबिक हर पार्टी में निश्चित अवधि के बाद चुनाव होता है। हालांकि हकीकत में यह महज औपचारिकता होती है, क्योंकि चुनाव पहले से तय होता है और अमूमन परिवार के सदस्य को ही चुना जाता है। पूर्वोत्तर के राज्य मेघालय में पीए संगमा के बेटे कोनराड संगमा सत्ता संभाले हुए हैं। पश्चिम के महाराष्ट्र में बाल ठाकरे के बेटे उद्धव ठाकरे तो धुर दक्षिण स्थित तमिलनाडु में एम. करुणानिधि के बेटे एमके स्टालिन सरकार चला रहे हैं। ठाकरे की सरकार में तो उनके बेटे आदित्य भी मंत्री हैं। वहीं स्टालिन का पूरा कुनबा ही राजनीति में सक्रिय है। आंध्र में वाईएस राजशेखर रेड्डी के बेटे जगनमोहन पूरी धमक के साथ मुख्यमंत्री बने हुए हैं। यहां तो विपक्षी तेलुगु देसम तक में परिवारवादी विरासत का बोलबाला है। पड़ोसी तेलंगाना में भी अलग राज्य के मुद्दे पर केंद्रित तेलंगाना राष्ट्र समिति जैसे दल के मुख्यमंत्री के. चंद्रशेखर राव की पार्टी पूरी तरह परिवार केंद्रित हो गई है। उनके बेटे केटीआर को उनका राजनीतिक उत्तराधिकारी माना जा रहा है। कर्नाटक में एचडी देवेगौड़ा की तीसरी पीढ़ी सक्रिय राजनीति में उतर आई है। ओडिशा में लंबे अर्से से सत्ता पर काबिज नवीन पटनायक भी अपने पिता बीजू पटनायक की विरासत को आगे बढ़ा रहे हैं। यही हाल

झारखंड का है। बिहार में भी लालू प्रसाद की राजद में उनके बेटे तेजस्वी की ताजपोशी हो चुकी है। यहां तक कि अलहदा किस्म की राजनीति का दावा करने वाली ममता बनर्जी भी अपने भतीजे अभिषेक मुखर्जी को ही आगे बढ़ा रही हैं।

स्पष्ट है कि वंशवाद की यह अमरबेल किसी एक दल तक सीमित नहीं है। इसे दिलचस्प कहें या विडंबना, लेकिन अधिकांश वंशवादी और परिवारवादी पार्टियां सैद्धांतिक रूप से उस लोहिया की समाजवादी विचारधारा को मानने का दावा करती हैं, जो वंशवाद और परिवारवाद के घनघोर विरोधी थे। ऐसे में बड़ा सवाल यही है कि लोकतंत्र के माई-बाप मतदाताओं को यह तथ्य समझना होगा कि लोकतांत्रिक राजतंत्र समानता के सिद्धांत का सबसे बड़ा दुश्मन है। जिस दिन मतदाता यह समझने लगेगा, वह समानता आधारित लोकतंत्र का प्रस्थान बिंदु होगा।

जनसत्ता

Date:21-03-22

डिजिटल मुद्रा की चुनौतियां

आलोक पुराणिक

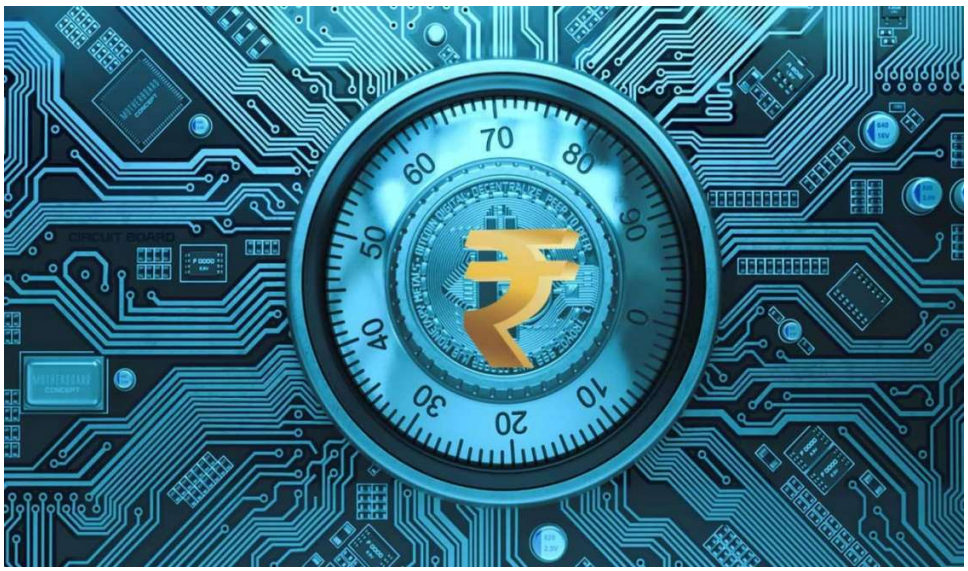

रिजर्व बैंक लगातार इस आशय की घोषणा कर रहा है कि वह डिजिटल मुद्रा पर काम कर रहा है। हाल में जब क्रिप्टोकरेंसी के चलन से जुड़ी बहसें तेज हुईं, तो इस आशय के प्रस्ताव सामने आने लगे कि रिजर्व बैंक को जल्दी से जल्दी अपनी डिजिटल मुद्रा को लाना चाहिए। सवाल यह है कि रिजर्व बैंक की डिजिटल मुद्रा यानी रिजर्व बैंक का डिजिटल रुपया होगा क्या!

भारत की आधिकारिक मुद्रा का नियंत्रक भारतीय रिजर्व बैंक है। नोटों पर रिजर्व बैंक का वादा दर्ज होता है कि वह धारक को एक तय रकम अदा करने का वचन देता है। इस वचन को पूरा करने का मौका अभी तक के इतिहास में कभी नहीं आया कि लोगों ने रिजर्व बैंक के दफ्तर के बाहर लाइन लगा दी हो कि रिजर्व बैंक अपने वादे को पूरा करे। रिजर्व बैंक ने वादा किया, इतने भर से मान लिया जाता है कि यह आधिकारिक मुद्रा है। यानी भारत में आधिकारिक मुद्रा का जारीकर्ता एक ही संगठन है- भारतीय रिजर्व बैंक। रिजर्व बैंक अब तक इस मुद्रा को भौतिक स्वरूप में ही जारी करता रहा है। पर डिजिटल स्वरूप में जारी मुद्रा भौतिक तौर पर जारी न होगी, यानी यह डिजिटल मोड में ही होगी। इसे छुआ ना जा सकेगा, न ही इसके नोट

होंगे। पर इसकी पूरे तौर पर कानूनी मान्यता होगी। तकनीकी भाषा में कहें तो रिजर्व बैंक अगर डिजिटल रुपया जारी करता है, तो यह लीगल टेंडर होगा। लीगल टेंडर से आशय ऐसी मुद्रा से है, जिसे लेने से भारत में कोई इनकार नहीं कर सकता। उदाहरण के लिए, कहीं ऐसा चलना हो सकता है कि रेजगारी न होने पर कोई दुकानदार टाफी चाकलेट दे देता है, पर यह लीगल टेंडर नहीं है। यानी किसी ग्राहक को विवश नहीं किया जा सकता कि वह धनराशि की जगह चाकलेट टाफी को स्वीकार करे ही। पर रिजर्व बैंक द्वारा जारी रुपया लीगल टेंडर है, इसलिए इसे किसी वस्तु या सेवा के भुगतान में इसे स्वीकार करना ही होगा। आम मुद्रा की तरह लेन-देन में इसका चलन होगा, लेकिन इसे भौतिक रूप में नहीं, डिजिटल रूप में उपयोग किया जा सकेगा। इसे डिजिटल बटुए में रखा जा सकेगा और वहीं से भुगतान और आनलाइन खरीददारी संभव होगी। इस तरह डिजिटल रुपया कागज के नोट की जगह बदला जा सकेगा। तो कुल मिलाकर यह डिजिटल रुपया एक तरह से कागज के नोट का डिजिटल संस्करण होगा।

क्रिप्टोकरेंसी की आमद के बाद ही रिजर्व बैंक के डिजिटल रुपए की चर्चा तेज हुई है। एक वर्ग में यह माना जा रहा है कि डिजिटल रुपए के आने से क्रिप्टोकरेंसी का आकर्षण कम हो जाएगा। पर सच यह है कि क्रिप्टोकरेंसी और डिजिटल रुपया दोनों अलग- अलग हैं। दोनों में कुछेक समानताएं भले दिखती हों, पर बुनियादी तौर पर दोनों में बहुत अंतर है। क्रिप्टोकरेंसी के विकल्प के तौर पर रिजर्व बैंक के डिजिटल रुपए को नहीं रखा जा सकता। डिजिटल रुपया तो भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा जारी रुपया होगा, आधिकारिक मुद्रा के तौर पर इसे जारी किया जाएगा। पर क्रिप्टोकरेंसी का हिसाब-किताब बहुत ही अपारदर्शी है। जैसे बिटकायन के भाव ऊपर नीचे क्यों जाते हैं, इसका वैज्ञानिक विश्लेषण किसी के पास नहीं है। जैसे भारतीय रुपए की आखिरी जिम्मेदारी रिजर्व बैंक की है, ऐसे में क्रिप्टोकरेंसी की जिम्मेदारी किसी की नहीं है। तो कुल मिलाकर क्रिप्टोकरेंसी एक तरह सट्टेबाजी से जुड़ा उत्पाद है। सट्टेबाजी से आशय अनुमानों और अनिश्चितता पर आधारित निवेश से है, जिसका कोई वैज्ञानिक या वैधानिक आधार नहीं होता है। रिजर्व बैंक के गवर्नर शक्तिकांत दास ने क्रिप्टोकरेंसी में निवेश के खिलाफ चेतावनी देते हुए कहा भी था कि इस निवेश के पीछे तो ट्यूलिप तक का आधार नहीं है। यह ट्यूलिप का जिक्र रिजर्व बैंक के गवर्नर ने क्यों किया? भयंकर जोखिम वाले अनिश्चित निवेश के लिए ट्यूलिप का संदर्भ है, जिसका ताल्लुक अविवेक और उन्माद से है। ट्यूलिप एक फूल का नाम है। यूरोप के देश हालैंड में सत्रहवीं शताब्दी ट्यूलिप को लेकर पागलपन-सा पैदा हो गया था। हर कोई सब कुछ छोड़ कर ट्यूलिप का व्यापार करने की सोचने लगा। मध्यवर्ग से लेकर गरीब तबके तक को ट्यूलिप में सुनहरा भविष्य नजर आने लगा था। लोगों ने अपने खेत, मकान और दुकान या तो गिरवी रख कर या बेच कर ट्यूलिप खरीद लिए। ट्यूलिप की एक पंखुड़ी की कीमत उस समय एक मकान की कीमत से ज्यादा थी। यह सिर्फ उन्माद था। रिजर्व बैंक के गवर्नर का आशय था कि ट्यूलिप निवेश के पीछे तो कम से कम ट्यूलिप का आधार था, पर क्रिप्टोकरेंसी में निवेश के पीछे तो कुछ भी नहीं है। ट्यूलिप तक नहीं है। यानी किसी भी तर्कहीन निवेश को ट्यूलिप उन्माद से जोड़ कर देखा जाता है। तो बात साफ यह है कि रिजर्व बैंक का डिजिटल रुपया आधिकारिक मुद्रा होगी और उसके भावों में वैसे उतार-चढ़ाव नहीं होंगे, जैसे क्रिप्टोकरेंसी के भावों में होते हैं। एक समानता है क्रिप्टोकरेंसी और रिजर्व बैंक के डिजिटल रुपए में यह होगी कि दोनों का स्वरूप डिजिटल होगा। पर क्रिप्टोकरेंसी को भारत में कभी वैध करेंसी के तौर पर या लीगल टेंडर के तौर पर मान्यता मिलेगी, इसकी संभावना नगण्य है।

रिजर्व बैंक को अंदाज है कि डिजिटल रुपए लाना और इसे सुचारु रूप से चला पाना आसान नहीं है। कई तकनीकी और व्यावहारिक दिक्कतें हैं। हर मुद्रा नोट की अलग पहचान और अलग नंबर होता है। डिजिटल रुपए में इसे कैसे प्रबंधित किया जाएगा, यह सवाल अलग है। बड़ा सवाल तो यह है कि डिजिटल रुपए किसे जारी किए गए, किसके पास कितने हैं,

यह जानकारियां कैसे और कितनी जुटाई जाएंगी? क्या कोई डिजिटल तौर पर यह जानकारियां देना पसंद करेगा कि मेरे पास कितने डिजिटल रुपए हैं?

भारत की अर्थव्यवस्था में नकद के व्यवहार की अपनी जगह है। वर्ष 2016 की नोटबंदी और फिर कोरोना काल में लोगों ने आनलाइन भुगतान की आदतें बढ़ाई तो हैं, पर नकद की अपनी जगह कायम है। कुल मिलाकर सवाल यह उठ खड़ा होगा कि जब बिना रिजर्व बैंक के डिजिटल रुपए के ही लोग नकद व्यवहार और आनलाइन भुगतान की ओर प्रवृत्त हो रहे हैं, तब रिजर्व बैंक के डिजिटल रुपए के आने का क्या असर पड़ेगा। क्या यह क्रिप्टोकरेंसी की ओर जा रहे निवेशकों को रोक पाएगा, इस सवाल का जवाब है नहीं। क्रिप्टोकरेंसी पर प्रतिबंध कितना लगाया जाएगा, यह भी अभी साफ नहीं है। पर साफ यह है कि क्रिप्टोकरेंसी के लिए जो लोग जा रहे हैं, उन्हें सिर्फ डिजिटल रुपए से नहीं रोका जा सकता। दोनों एकदम अलग-अलग उत्पाद हैं। इसलिए दोनों की तुलना निरर्थक है।

डिजिटल रुपया मौद्रिक ढांचे में तकनीक की एक और आमद के तौर पर चिन्हित होगा, पर क्रिप्टोकरेंसी में निवेश इससे हतोत्साहित होगा, इसकी उम्मीद नहीं की जा सकती। क्रिप्टोकरेंसी में निवेश को हतोत्साहित करने के लिए कराधान से लेकर प्रतिबंध तक बहुत दूसरे विकल्प हैं। रिजर्व बैंक को इन सवालों से जूझना होगा कि किस हद तक वह तमाम लोगों के आंकड़े अपने पास रख सकता है और यह किस तरह से संभव होगा। तकनीक के स्तर पर, कानून के स्तर पर, जन शिक्षण के स्तर पर, ये सारी चुनौतियां सामने आएंगी। इन पर सलीके से विचार करके ही रिजर्व बैंक के डिजिटल रुपए का रास्ता आगे साफ हो सकता है। यह याद रखना होगा कि ये तकनीकी प्रयोग सामान्य तकनीकी प्रयोग नहीं हैं, देश की मौद्रिक व्यवस्था इससे जुड़ी हुई है। इसलिए डिजिटल रुपए के आगमन में भले ही थोड़ी देर हो जाए, पर जब यह आए तो एकदम दुरुस्त अवस्था में आना चाहिए।

राष्ट्रीय सहारा

Date:21-03-22

जापान से बढ़ता सहयोग

संपादकीय

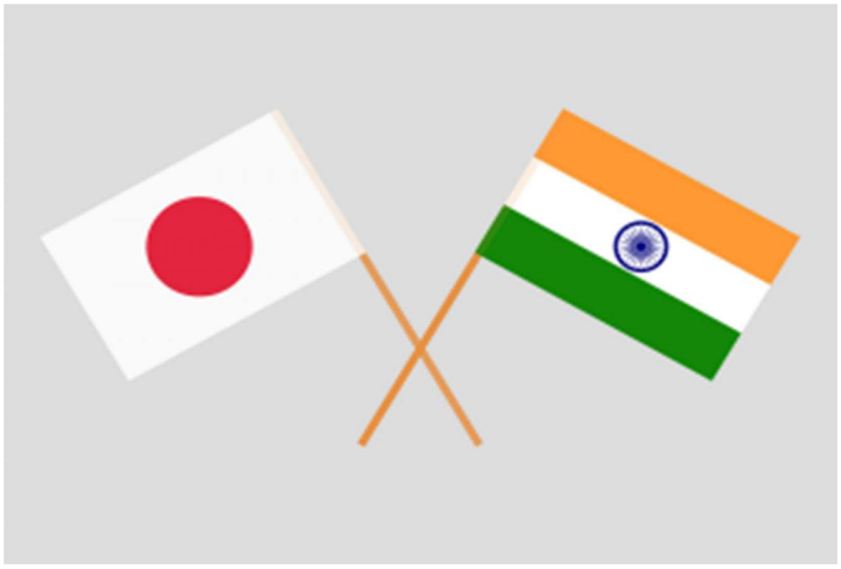

भारत और जापान आर्थिक, कारोबारी और ऊर्जा क्षेत्र समेत अनेक क्षेत्रों में सहयोग पर सहमत हुए हैं। दोनों देशों के शीर्ष नेतृत्व के बीच 'सार्थक' बातचीत के उपरांत छह समझौतों पर शनिवार को हस्ताक्षर किए गए। भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी और उनके जापानी समकक्ष फुमियो किशिदा ने संयुक्त रूप से मीडिया को संबोधित करते हुए कहा कि भारत-जापान भागीदारी को और गहन करना न सिर्फ दोनों देशों के लिए महत्त्वपूर्ण है, बल्कि हिंद-प्रशांत क्षेत्र और पूरे विश्व के स्तर पर शांति, समृद्धि और स्थिरता को प्रोत्साहन देने के लिए भी जरूरी है। जापान के प्रधानमंत्री किशिदा शनिवार को एक उच्चस्तरीय प्रतिनिधिमंडल के साथ नई दिल्ली पहुंचे। कोरोना महामारी से बदले वैश्विक परिदृश्य और रूस-यूक्रेन युद्ध से उभरे हालात के मद्देनजर किशिदा की भारत यात्रा महत्त्वपूर्ण है, जिससे दोनों मित्र देशों के संबंधों को नया आयाम मिलेगा। दोनों देश वैश्विक घटनाक्रम के असर से स्वयं को बचाए रखने को तत्पर हैं। प्रधानमंत्री मोदी ने कहा भी है कि विश्व अब भी कोरोना और उसके दुष्प्रभावों से जूझ रहा है, और वैश्विक अर्थव्यवस्था के पटरी पर लौटने की प्रक्रिया में अड़चनें आ रही हैं, और भू-राजनीतिक घटनाएं नई चुनौतियां पेश कर रही हैं। जापान के प्रधानमंत्री किशिदा ने यूक्रेन पर रूसी हमले को गंभीर बताया। उन्होंने भारत और जापान को 'खुले एवं मुक्त' हिंद-प्रशांत के लिए साथ मिलकर काम करने का आह्वान किया। जापान 2014 में तय की गई निवेश प्रोत्साहन साझेदारी के तहत अगले पांच साल में भारत में 3,20,000 करोड़ रुपये का निवेश करेगा। भारत के पूर्वोत्तर के लिए सतत विकास की पहल में भी भागीदारी कर रहा है। 2017 में भारत-जापान एक्ट ईस्ट फोरम की स्थापना कर चुके हैं, जिसका मकसद पूर्वोत्तर भारत में चल रही परियोजनाओं के बीच समन्वय करना है। हाल के वर्षों में भारत में जापानी निवेश सरकार के स्तर पर भी बढ़ा है, और निजी स्तर पर भी। देश में समर्पित माल ढुलाई गलियारा (फ्रेट कॉरिडोर) और मुंबई-अहमदाबाद हाई स्पीड रेल परियोजना जैसी महत्त्वाकांक्षी परियोजाएं जापान के सहयोग से क्रियान्वित की जा रही हैं। स्टार्टअप भारत का महत्त्वपूर्ण लक्षित क्षेत्र है, जिसमें जापान उल्लेखनीय योगदान कर रहा है। अब दोनों देश स्वच्छ ऊर्जा साझेदारी को भी नये स्तर पर ले जाने पर सहमत हुए हैं। इसके तहत जापान इलेक्ट्रिक वाहनों की बैटरी मुहैया कराने में सहयोग करेगा। बेशक, भारत और जापान परस्पर सहयोग की नई इबारत लिख रहे हैं। कह सकते हैं कि दोनों मित्र देशों के बीच आपसी समझ और सामरिक सहयोग समय के साथ परिपक्व हो रहे हैं।

Date:21-03-22

सभी के लिए समान नियम बने

विनीत नारायण

सुजलाम, सुफलाम, मलयज शीतलाम, शस्य श्यामलाम, भारत माता इतनी उदार हैं कि हर भारतवासी सुखी, स्वस्थ व सम्पन्न हो सकता है। पर स्वतंत्रता के 75 वर्ष बाद भी अधिकतर आबादी पेट पालने के लिए भी दान के अनाज पर निर्भर है। कई दशकों तक 'गरीबी हटाओ' के नाम पर उसे झुनझुना थमाया गया। पर उसकी गरीबी दूर नहीं हुई। आज गरीबी के साथ युवा बेरोगगारी एक बहुत बड़ी समस्या बन गई है। जिसका निदान अगर जल्दी नहीं हुआ तो करोड़ों युवाओं की ये फौज देश भर में हिंसा, अपराध और लूट में शामिल हो जाएगी। हर राजनैतिक दल अपने वोटों का ध्रुवीकरण के लिए जनता को किसी न किसी नारे में उलझाए रखता है और चुनाव जीतने के लिए उसे बड़े-बड़े लुभावने सपने भी दिखाता है।

पिछले कुछ वर्षो से अल्पसंख्यक मुसलमानों का डर बहुसंख्यक हिंदुओं को दिखाया जा रहा है। आधुनिक सूचना तकनीकी की मदद से 'इस्लमोफोबिया' को घर-घर तक पहुंचा दिया गया है। जहां तक भारत में मुस्लिम आबादी का प्रश्न है वे आज 17 करोड़ हैं और हम हिंदू 96 करोड़ हैं। अपनी आबादी के इतने बड़े हिस्से को अगर हम अपनी हर समस्या का कारण मानते हैं तो इसका निदान क्या है? उनके और हमारे बीच चले आ रहे विवाद के विषयों का समाधान खोजा जाए? उल्लेखनीय है कि सरसंघ चालक डॉक्टर मोहन भागवत जी मुसलमानों के विषय में कई बार कह चुके हैं कि उनके और हमारे पुरखे एक ही थे, कि उनका और हमारा डीएनए एक है, कि भारत में रहने वाला हर व्यक्ति हिंदू है।

अशांत समाज में आर्थिक गतिविधियां ठहर जाती हैं। इस सबसे अलग एक प्रश्न हम सब सनातन धर्मियों के मन में सैकड़ों वर्षो से घुट रहा है। भारत की सनातन संस्कृति को गत हजार वर्षो में राजाश्रय नहीं मिला। कई सदियों में तो उसका दमन किया गया। जिसका विरोध सिख गुरु ओं व शिवाजी महाराज जैसे अनेक महापुरुषों ने किया। पर महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इनका विरोध उस राज सत्ता से था जो हिंदुओं का दमन करती थीं। सामाजिक स्तर पर इन्हें मुसलमानों से कोई बैर नहीं था। क्योंकि इनकी सेना और साम्राज्य में मुसलमानों को महत्त्वपूर्ण पदों पर तैनात किया गया था। बंटवारे से पहले जो लोग भारत और पाकिस्तान के भौगोलिक क्षेत्रों में सदियों से रहते आए थे, उनके बीच भी पारस्परिक सौहार्द और प्रेम अनुकरणीय था। बंटवारे के बाद इधर से उधर या उधर से इधर गए ऐसे तमाम लोगों के इंटरव्यू यूट्यूब पर भरे पड़े हैं। ये बुजुर्ग बताते हैं कि बंटवारे की आग फैलने से पहले तक इनके इलाकों में साम्प्रदायिक वैमनस्य जैसी कोई बात ही नहीं थी।

एक तरफ सनातन धर्म के मानने वाले वे संत और हम जैसे साधारण लोग हैं, जिनका यह विश्वास है कि सनातन धर्म ही मानव और प्रकृति के कल्याण के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है। इसीलिए हम इसका पालन राष्ट्रीय स्तर पर होते देखना चाहते हैं। वैसे भी दुनिया के सभी सम्प्रदाय वैदिक संस्कृति के बाद पनपे हैं। पर ऐसा होता दिख नहीं रहा। चिंता का विषय यह है कि हिंदुत्व का नारा देने वाले भी वैदिक सनातन संस्कृति की मूल भावना व शास्त्रोचित सिद्धांतों की अवहेलना करते हुए अति उत्साह में अपने मनोधर्म को वृहद् हिंदू समाज पर जबरन थोपने का प्रयास करते हैं, जबकि हमारे सनातन धर्म की विशेषता ही यह है कि इसका प्रचार-प्रसार मनुष्यों की भावना से होता है तलवार के जोर से नहीं।

रही बात मुसलमानों की तो इसमें संदेह नहीं कि मुसलमानों के एक भाग ने भारतीय संस्कृति को अपने दैनिक जीवन में काफी हद तक आत्मसात किया है। ऐसे मुसलमान भारत के हर हिस्से में हिंदुओं के साथ सौहार्दपूर्ण वातावरण में जीवन यापन करते हैं। किंतु उनके धर्मांध नेता अपने राजनैतिक लाभ के लिए उन्हें गुमराह करके ऐसा वातावरण तैयार करते हैं, जिससे बहुसंख्यक हिंदू समाज न सिर्फ असहज हो जाता है बल्कि उनकी ओर से आशंकित भी हो जाता है। हिंदू समाज

की ये आशंका निर्मूल नहीं है। मध्य युग से आजतक इसके सैकड़ों उदाहरण उपलब्ध हैं। ताजा उदाहरण अफगानिस्तान के तालिबानों का है जिन्होंने सदियों से वहां रह रहे हिंदुओं और सिखों को अपना वतन छोड़ने पर मजबूर कर दिया है।

ऐसे में अब समय आ गया है कि शिक्षा, कानून और प्रशासन के मामले में देश के हर नागरिक पर एक सा नियम लागू हो। धार्मिक मामलों को समाज के निर्णयों पर छोड़ दिया जाए। उनमें दखल न दिया जाए। ऐसे में मुसलमानों के पढ़े-लिखे और समझदार लोगों को भी हिम्मत जुटा कर अपने समाज में सुधार लाने का काम करना चाहिए, जिससे उनकी व्यापक स्वीकार्यता बन सके। वैसे ही जैसे हिंदुत्व का झंडा उठाने वाले नेताओं और कार्यकर्ताओं को गम्भीरता से सनातन धर्म के सिद्धांतों का पालन करना चाहिए, न कि उसमें घालमेल। तभी भारत अपनी 135 करोड़ जनता की अपेक्षाओं के अनुरूप खड़ा हो सकेगा।

Live हिन्दुस्तान .com

Date:21-03-22

जापान के साथ

संपादकीय

भारत और जापान के बीच बढ़ते संबंधों की जितनी सराहना की जाए कम होगी। जापान के प्रधानमंत्री फुमियो किशिदा की पहली भारत यात्रा अपेक्षा अनुरूप ही बहुत फलदायी रही है। दोनों देशों के बीच परस्पर विश्वास इनके बीच होने वाले व्यावसायिक, तकनीकी, सांस्कृतिक, रणनीतिक समझौतों में साफ झलकता है। कुछ ही देश हैं, जिनके प्रति भारतीयों को स्वाभाविक लगाव है, उनमें से एक जापान सबसे अलग है। दोनों देशों के बीच व्यापार की मात्रा उम्मीद और लक्ष्य के अनुरूप बढ़ती जा रही है, तो कोई आश्चर्य नहीं। सबसे बड़ी बात कि जापान आगामी पांच वर्षों में भारत में 3.20 लाख करोड़ रुपये का निवेश करेगा। चूंकि साल 2014 में तय लक्ष्य कमोबेश हासिल हो चुके हैं, इसलिए भी उम्मीदें बढ़ गई हैं। दोनों देशों के बीच मोटे तौर पर छह से ज्यादा समझौते हुए हैं। तकनीकी, व्यवसाय, पर्यावरण, साइबर सुरक्षा इत्यादि के स्तर पर भी भारत को फायदा होने वाला है। यह बहुत खुशी की बात है कि आज भारत में 1,455 जापानी कंपनियां हैं। ग्यारह जापानी औद्योगिक टाउनशिप (जेआईटी) की स्थापना की गई है। जापान विदेशी पूंजी निवेश के मामले में भारत का पांचवां सबसे बड़ा स्रोत है।

भारत-जापान के बीच कोरोना की वजह से पिछले दो वर्ष से उच्चस्तरीय वार्ता एक तरह से रुकी हुई थी और अब फुमियो किशिदा पहली बार भारत आए हैं। हमारे प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी साल 2014 में जापान गए थे और उसके बाद से दोनों देशों के बीच संबंधों को और बल मिला है। जापान आज एक शांत और सांस्कृतिक रूप से सजग देश है। वह भारत की तरह ही शांति का समर्थक है, उसका भी किसी तरह का साम्राज्यवादी एजेंडा नहीं है। इसलिए दोनों देशों के बीच विशेष लगाव का विस्तार न केवल एशिया, बल्कि विश्व के लिए भी कारगर रहा है। मुंबई-अहमदाबाद हाई स्पीड रेल, डेडिकेटेड फ्रेट कॉरिडोर, अनेक मेट्रो परियोजनाएं जापान के सहयोग से बहुत सफलतापूर्वक चल रही हैं। बुनियादी ढांचे में जापान से

मिला सहयोग साफ झलकता है। रणनीतिक रूप से महत्वपूर्ण बुनियादी ढांचों के विकास में भी जापान हमारा बहुत सहयोग कर रहा है।

कौशल विकास में भी जापान का बड़ा योगदान है और किसी भी अन्य देश की तुलना में प्रशिक्षण और अनुशासन सिखाने में जापान श्रेष्ठ है। जापान हमें न केवल उदारता से ऋण देता है, हमें विकास करना भी सिखाता है। ऐसे देश के साथ संबंध विस्तार की कोई भी कोशिश स्वागतयोग्य है। भारत को रणनीतिक रूप से भी जापान को संदेश देते रहना चाहिए। जापान विगत कुछ वर्षों से ब्रिक्स की तरफदारी कर रहा है। इसी साल के अंत में ब्रिक्स (ब्राजील, रूस, भारत, चीन, दक्षिण अफ्रीका) शिखर सम्मेलन के लिए मंच तैयार हो रहा है। यह आयोजन चीन में होना है, जापान चाहता है कि भारत इस सम्मेलन या सहयोग योजना में शामिल हो। लेकिन अब भारत ने यह साफ कर दिया है कि जब तक सीमा विवाद नहीं सुलझ जाता, तब तक चीन के साथ संबंध सामान्य नहीं हो सकते। हम जानते हैं कि लद्दाख गतिरोध का समाधान नहीं हो पा रहा है। लगता है, चीन ने पिछले सप्ताह हॉट सिप्रंग से पीछे हटने की बात कहकर जापानी प्रधानमंत्री की भारत यात्रा की पृष्ठभूमि तैयार की थी, लेकिन भारत को सावधान रहना चाहिए। पूरे सद्भाव, सहयोग के साथ जापान को साथ रखते हुए अपनी सुरक्षा भी सुनिश्चित करनी चाहिए।